सूचना का अधिकार : आवश्यकता एवं उपादेयता

संजय कुमार पटेल
शोध छात्र, समाजशास्त्र विभाग,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

भारत के लोकतंत्रात्मक जीवन मे जहाँ अनेक उपलब्धियाँ दर्ज है तो कुछ ऐसी खामियाँ हैं जिनका वक्त रहते इलाज जरूरी है। कथनी और करनी की एकरूपता को लेकर चलने वाले राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी की लड़ाई गाँव और गरीब के लिए थी। ब्रितानी हुकूमत तो एक रूकावट मात्र थी, जिसको दूर करने के लिए उन्होंने आजादी की लड़ाई की रहनुमाई की थी। इसी गाँव और गरीब को केन्द्र में रखकर जब स्व0 राजीव गाँधी ने एक रूपयें का हिसाब किया तो पाया कि उसमें वे 85 पैसे बीच में हड़पकर लिए जाते हैं।



https://www.google.co.in/search?q=suchana+ka+adhikar+in+hindi&tbm=isch&tbs=rimg:CSWXueqXuGC1Iji9zRZRkyez8VgH6qj3Cgt4sDU0TYv5ao9-yRj360ztQIGNhmj6cWHBW5lCA60M4gOSJ-n4Dg5whCoSCb3NFlGTJ7PxEU6cc8xTidU0KhIJWAfqqPcKC3gRyD8gGUNY12MqEgmwNTRNi_1lqjxGJgrZWt4pA-CoSCX7JGPfrTO1AEX96RIIkTsddKhlJgY2GaPpxYcERQnieD4UMdUYqEglbmUIDrQziAxESm13GlcE1ISoSCZIn6fgODnCEEUlFoRX7IFOT&tbo=u&sa=X&ved=0ahUKEwjFyM-KqMPXAhXLjLwKHSKWATQQ9C8IHw&biw=1517&bih=735&dpr=0.9#imgrc=LRP6tLMgmlr_3M:

इस 85 पैसे की लूट–खसोट ने सम्पूर्ण लोकतंत्र की जड़ को खोखला कर डाला। लिहाजा इस 85 पैसे की पड़ताल शुरू हुई। यहीं पर बुद्धिजीवियों, स्वयंसेवी संगठनों, पत्रकारों, निष्ठावान राजनैतिक दलों, जनप्रतिनिधियों के मध्य प्रशासनिक संवेदनशीलता, पारदर्शिता एवं जवाबदेही को अत्यावश्यक अनुभव किया गया। जैसे–जैसे यह बात आगे बढ़ती गयी हम सूचना की अहमियत समझते चले गये। इसी बिन्दु पर अनुभव किया गया कि गोपनीयता के नाम पर हम ठगे गये हैं। इस गोपनीयता ने ही आम नागरिकों को लोकतंत्र सहभागी होने से रोका है। इसी के कारण भ्रष्टाचार पनपा है। इसी कारण राजनीति का अपराधीकरण हुआ।

जनप्रतिनिधियों एवं प्रशासकों के हाथों में सत्ता केन्द्रित होती चली गयी। तब लगा कि लोकतंत्र और सूचना का एक अटूट रिश्ता है। यह रिश्ता जितना गहरा होगा, उतना ही पारदर्शिता संवेदनशीलता एवं जवाबदेही व्यवस्था में आयेगी अगर इस रिस्ते को तोड़ने की चेष्टा की जायेगी तो गोपनीयता की आड़ में वे सब बुराइयाँ पनपेंगी जो लोकतंत्र के लिए घातक होती हैं। यह मानना कि सूचना के अधिकार से भ्रष्टाचार को समाप्त किया जा सकता है। पूर्ण सत्य नहीं है। वस्तुतः लोकतंत्र को स्वस्थ्य बनाये रखने और उसमें आम आदमी के वजूद को कायम रखने के लिए सूचनाओं का सुलभ होना आत्यावश्यक है।

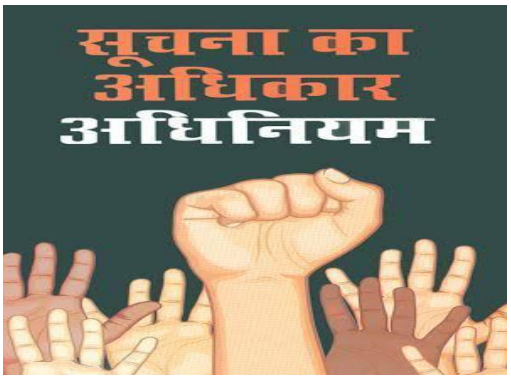
सूचना के इस युग में जब सरकारें ई–गवर्नेस की बातें कर रही हैं तब दुनिया के सबसे बड़े लोकतांत्रिक मुल्क की जनता की जानकारी के हक से वंचित रखना लोकतंत्र के साथ घिनौना मजाक है। यदि ब्रितानी हुकूमत द्वारा बनाये गये गोपनीयता अधिनियम की अब भी जरूरत है तो फिर ई–गवर्नेस की बातें फिजूल है। अन्य अन्तर्विरोधों की तरह अब भी इस गोपनीयता को जरूरी कहने और समझने वाले अफसरों एवं जन प्रतिनिधियों की नीयत पर शक लाजमी है।

अब जबकि सूचना का अधिकार लागू हो गया है तो इससे देश के लिए एक नया रास्ता खुल रहा है और संदेश भी जा रहा है। जनतंत्र में जन को केन्द्र बनाकर प्रशासनिक संवेदनशीलता, पारदर्शिता एवं जवाबदेही सूचना के अधिकार के द्वारा ही फलीभूत हो सकती है। इसी से कथनी और करनी का वह फर्क खत्म किया जा सकता है जो हमारे लोकतंत्र के लिए कोढ़ में खाज बन चुका है। इसी से भ्रष्टाचार की रोकथाम का रास्ता निकलेगा।

इसलिए भारत सरकार ने जुलाई 2004 में अपने न्यूनतम साझा कार्यक्रम को लोगों तक पहुचाने कार्यों एवं बजटों को लेकर लोगों के बीच पारदर्शिता लाने के लिए सूचना का अधिकार कानून लाने की बात की गई **1 मई 2005 में तत्कालीन प्रधानमंत्री डॉ0 मनमोहन सिंह** के नेतृत्व में इस कानून के संबंध

में कानून निर्माण के लिए विधेंयक सदन में रखा गया और **11 मई 2005 को लोकसभा और 15 मई 2005** को राज्य सभा में पारित होने के बाद 16 जुलाई 2005 को राष्ट्रपति की सहमति प्राप्त होने के साथ ही इस विधेयक को केन्द्रीय कानून का दर्जा प्राप्त हो गया। यह कानून पूर्ण रूप से **13 अक्टूबर 2005** को लागू हुआ है। यह संयोग ही है कि सूचना का अधिकार संबंधी कानून विजयदशमी के दिन लागू हुआ था। इस तरह यह भारत के नागरिकों के लिए दोहरी विजय पर्व है।

गणतंत्र के छठवें दशक में भारत का आम नागरिक उस हथियार से लैस हो गया जिसके जरिए वह व्यवस्था का झूला हिला सकता है। सरकारी कुर्सी पर बैठा हुआ गेरूआ बाबू उसके लिए दाता की इच्छा हुई तो दिया न हुई तो इंकार कर दिया। अब जबकि सूचना के अधिकार से जायज सूचना मांग सकता है और बाबू को वही सूचना देनी होगी वरना जुर्माने के लिए तैयार रहना होगा। व्यक्ति चाहे वह गाँव का हो या शहर का अनपढ़ या पढ़ा लिखा अपने से जुड़ी सूचना लेने का हकदार हो गया है।



https://www.google.co.in/search?tbm=isch&sa=1&ei=058NWo7FH4rvvATMlpCQBw&q=suchana+ka+adhikar+in+hindi&oq=suchana+ka+adhikar+in+hindi&gs_l=psy-ab.3...477054.484062.0.484992.0.0.0.0.0.0.0.0..0.0....0...1.1.64.psy-ab..0.0.0....0.THf7DnefDVQ#imgrc=K6w-oZ1WcFf5DM:

वह मात्र 10 रूपयें के मामूली शुल्क जमा करके सूचना ले सकता है। यहाँ तक कि सरकार से अनुदान लेने वाले गैर सरकारी संगठन से भी सूचना मांग सकता है। यकीनन इससे प्रशासन पारदर्शी बनेगा जनता के प्रति शासन की जवाबदेही स्पष्ट होगी और सरकार के विधि स्तरों पर भ्रष्टाचार पर अंकुश लगेगा। देश के रक्षातंत्र और खुफिया तंत्र को इससे परे रखा गया है। साथ ही जम्मू–कश्मीर को भी इसकी जद में शामिल नहीं किया गया है। लेकिन व्यवस्था का बाकी हिस्सा इससे बच नही सकता बशर्ते कि इसका कार्यान्वयन ईमानदारी से हो। लेकिन सवाल यह उठता है कि केन्द्र के अलावा राज्य सरकारों द्वारा भी इस कानून को लागू कर दिये जाने के बावजूद कोई विशेष परिवर्तन क्यों नहीं दिखता? केन्द्र में मुख्य सूचना आयुक्त की नियुक्ति के अलावा क्या कुछ हो पाया है? अनेक राज्यों में तो अब तक की कोई खास तरक्की नहीं हुआ है। परन्तु फिर भी रोजाना देश के किसी न किसी कोने से आर.टी.आई के द्वारा लोग सूचना प्राप्त कर रहे हैं और व्यवस्था में जो लचरपन आ गया था वह धीरे–धीरे सुधर रहा है।

आर.टी.आई ने जहाँ लोकतंत्र के प्रमुख सहभागी जन को सूचना प्राप्त करने का अवसर दिया है तो ठीक इसके विपरीत समाज के अपराधी, भ्रष्टाचारी, एवं नकारा नौकरशाहों ने कई ऐसे जागरूक व्यक्तियों को जिन्होंने आर.टी.आई. के माध्यम से सूचना प्राप्त करना चाहा उन्हें जान से मार दिया है। आज सरकार को एक ऐसी व्यवस्था का निर्माण करना होगा जहाँ आर.टी.आई. के द्वारा सूचना मांगने वाले व्यक्ति अपने आप को सुरक्षित महसूस कर सके क्योंकि सूचना प्राप्त करना एवं राष्ट्र में सुरक्षित रहना उनका अधिकार है वह जनतंत्र के प्रमुख निर्धारक है फिर क्यों उन्हीं को अपने अधिकारों को मांगने पर जान से मार दिया जाता है या तो जान से मारने की धमकी दी जाती है जो हमारे राष्ट्र के नकारा व्यवस्था को उजागर करता है। इसलिए राष्ट्र के नीति निर्धारकों को ईमानदारी पूर्वक जनता के अधिकारों को लागू करने के साथ सही ढंग से क्रियान्वित करना चाहिए।

सूचना का अधिकार

लोकतंत्र की विकृतियों के समाधान तथा उसे जीवन्त बनाने के लिए अपेक्षित उपायों में से एक सशक्त उपाय है सूचना का अधिकार। सूचना के अधिकार अथवा जानने के हक की मांग मूलतः एक सुधारवादी मांग है। इस मांग का संबंध व्यवस्था के बुनियादी बदलाव से चाहे न हो लेकिन इससे निष्क्रिय एवं नकारा हो चुके तंत्र में नवशक्ति का संचार होगा। लोकतंत्र जनता के प्रति उत्तरदायी बनाने की इस धारणा की मौलिक मांग है कि सरकार आमजन को सूचना का अधिकार दे, निश्चित शुल्क लेकर निश्चित अवधि में सरकारी कागजों की फोटो प्रतियाँ उपलब्ध कराये जिससे सरकारी

कामकाज में होने वाले घोटालों को पकड़ा जा सके। अंग्रजों द्वारा निर्मित 1923 का सरकारी गोपनीयता कानून ज्यों का त्यों प्रभावी बना रहा ब्रिटिश उपनिवेश कालीन यह अपने आप सरकारी भ्रष्टाचार के कुकर्मों को छिपाने का सबसे बड़ा साधन बन गया है।

सूचना के अधिकार का औचित्य

सूचना के अधिकार की अवधारण को स्पष्ट करने के लिए यह निर्धारित किया जाना आवश्यक है कि सूचना के अधिकार का औचित्य क्या है? यह औचित्य निम्नलिखित बिन्दुओं से स्पष्ट हो जाता है।

(1) सवाल वजूद का है– इस अधिकार का औचित्य प्रतिपादित करने वाला सबसे बड़ा घटक आदमी की जिन्दगी से जुड़ा है। जिन्दा रहने के लिए जानना जरूरी है। ये जानकारियाँ ही हैं–जो आम और खास आदमी का फर्क पैदा करता है। जिसके पास जानकारी है वह खास बन गया तथा जिसके पास जानकारी का अभाव है वह पिछड़ गया। बात केवल पिछड़ने तक नहीं रह जाती है। जानकारी का अभाव आदमी के वजूद के लिए खतरा बन जाता है। जाहिर है कि जनप्रतिनिधियों, बुद्धिजिवियों, पत्रकारों के लिए जानने के हक के लिए अनेक आयाम और मजदूरों के लिए यह वजूद का चीज है। दिहाड़ी पर काम करने वाले किसी भूमिहीन किसान के लिए तो यह जीवन–मरण का प्रश्न है। ग्रामीण ये जानना चाहे कि उनके विकास के लिए जो धन आया वह कहाँ, कैसे खर्च हुआ? उसे कौन हड़प गया? गाँव की खुशहाली के लिए जो सड़क–पुलिया, कुआँ, स्कूल बनाने की बात कही गयी थी, वे निर्मित क्यों नहीं हुई? सारी खुशहाली और विकास सरकारी कागजों पर ही क्यों रह गये। जानने के अधिकार से जुड़े ये सारे प्रश्न रोजी–रोटी और वजूद से जुड़े हैं।

(2) 85 पैसे कहाँ गये? स्वर्गीय प्रधानमंत्री राजीव गाँधी ने भ्रष्टाचार के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए कहा था कि विकास के लिए निर्धारित एक रूपये में से लक्षित वर्ग तक मात्र 15 पैसे पहुँच पाते हैं शेष 85 पैसे के हिसाब की मांग है। कहाँ जाते हैं, कुछ पता नही चलता। वस्तुतः सूचना का अधिकार उसी 85 पैसे के हिसाब की मांग है। जब इस 85 पैसे की खोजबीन की जायेगी तब ज्ञात हो पायेगा कि आखिर कौन से पेट कुएँ बन गये हैं और कौन से पेट दो जून की रोटी से वंचित रह गयें हैं।

इन परिस्थियों में सूचना के अधिकार द्वारा भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाया जा सकता है। यह भ्रष्ट व्यवस्था के विरूद्ध नियंत्रण एवं संतुलन कायम करने वाला यंत्र है। इसके द्वारा सरकारी खर्चे का हिसाब माँगा जा सकता है। विकास कार्यो की सूचना मांगी जा सकती है सम्बन्धित अधिकारी पर अंकुश एवं आत्मनियन्त्रण विकसित करता है, इससे भ्रष्टाचार का जोरदार ढंग से विरोध किया जा सकता है।

जनसहभागिता का अभिकरण

जनतान्त्रिक समझ के साथ–साथ सूचना इसलिए भी आवश्यक होती जा रही है कि सूचना के उपयोग से लोग व्यक्तिगत एवं सामूहिक कार्यों की योजना निर्मित कर सकते हैं योजनाओं के निष्पादन के लिए सम्बन्धित लोगों पर दबाव बनाए रख सकते हैं। प्रशासन की नव संकल्पना में लोकनीति के लिए लोकनीति का निष्पादन एवं मूल्यांकन तीन स्तरों पर जनसहभागिता को अनिवार्य माना है। सूचना का अधिकार जनतंत्र में जनसहभागिता की प्रक्रिया को समृद्ध करता है और प्रशासनिक कमजोरियों को उजागर कर उसके परिष्कार का अवसर प्रदान करता है।

सार्वजनिक उत्तरदायित्व एवं नियंत्रण

लोकतान्त्रिक प्रशासन का एक प्रतिमान यह है कि शक्ति सदैव उत्तरदायित्व के अनुरूप होनी चाहिए। प्राधिकारी को अपने प्राधिकार का उपयोग करते समय जनता के प्रति उत्तरदायी होना चाहिए। इसमें शक्ति के दुरूपयोग पर रोक सम्भव है। आजादी के बाद से सरकारी गोपनीयता कानून की आड़ में प्रशासक जनता से दूरी बनाये हुए है। इसका मुख्य उद्देश्य नौकशाहों द्वारा अपनी अकर्मण्यता को छिपाने और अपने भ्रष्ट चरित्र पर पर्दा डालना तथा जनता के सेवक नहीं अपितु उसके स्वामी बनकर कार्य करना रहा है। सूचना के अधिकार द्वारा प्रशासकों को लोगों को अपनी अधिकारिक शक्ति के प्रयोग का सन्तोषजनक विवरण देने के लिए बाध्य किया जाता है। यह लोकतंत्र में जनता की इच्छा या आकांक्षा के प्रति सरकारी कर्मचारियों के उत्तरदायित्व एवं जवाबदेही को सुनिश्चित करता है। जिससे तन्त्र को पारदर्शी बना कर सही बनाया जा सकें।

यह हमें जानने की दो सीधी किन्तु क्रान्तिकारी माँग है जो इस तथ्य को प्रकट करती है कि जब तक आम आदमी को प्रशासनिक कार्य कलापों सार्वजनिक व्यय तथा योजना निष्पादन के सम्बन्ध में नियन्त्रणकारी शक्ति प्रदान नहीं की जायेगी तब तक विकास दिवास्वप्न बना रहेगा। इस असंगति की पीड़ा को भारत आधी शताब्दी तक भुगत चुका है।

ई–शासन का सपना

सूचना तकनीक के क्षेत्र में पिछले एक दशक में आयी क्रान्ति ने अपना प्रभाव दिखाना शुरू कर दिया, सूचना प्रौद्योगिकी मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में परिवर्तन करने की शक्ति रखती हैं 21वीं शताब्दी का समाज ज्ञान का समाज होगा। सूचना तकनीकी के क्षेत्र में भारत का विशिष्ट स्थान अर्जित कर चुका है। सरकारी स्तर पर वर्ष 2008 तक सभी के लिए सूचना प्रौद्योगिकी का उद्देश्य घोषित किया गया है। इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु नीतियों व कार्यविधियों में बदलाव किये गये है।

निःसन्देह सूचना प्रौद्योगिकी ने राष्ट्र की जीवन शैली में महत्वपूर्ण बदलाव किये हैं भारत सरकार द्वारा वर्ष 2001 को ई–शासन की बुनियादी अवधारणा का सीधा सा अर्थ यह है कि शासन सम्बन्धी काम–काज में सूचना तकनीक का इस्तेमाल। मकसद यह है कि जवाबदेह पारदर्शी सरल जनता की आवश्यकताओं को पूर्ण करने वाला शासन।

भारतीय संविधान एवं न्यायिक निर्णय

भारतीय संविधान में सूचना प्राप्त करने सम्बन्धी किसी विशिष्ट अधिकार का उल्लेख नहीं है। किन्तु **अनुच्छेद 19 (1) (क)** में वाक व अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के तहत इसे शामिल किया गया है। भारतीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इसी अनुच्छेद के परिप्रेक्ष्य में समय–समय पर अनेक निर्णय देते हुए सूचना के अधिकार की प्रकान्तर से संवैधानिक अधिकार घोषित किया गया है। सर्वोच्च न्यायालय के कतिपय निर्णयों ने सूचना के अधिकार को स्थापित किया है। जैसे–हमददै दवाखाना बनाम भारत सरकार (1960) वाद में स्पष्ट किया है कि वाक् एवं अभिव्यक्ति के अधिकार में सार्वजनिक हित कि विचार और सूचनाएं प्राप्त करने तथा प्रदान करने का अधिकार शामिल है।

सन् 1975 में उत्तर प्रदेश राज्य बनाम राजनारायण के मामले में सरकारी दस्तावेजों को सार्वजनिक करने एवं इस सन्दर्भ में सरकार के विशेषाधिकार को लेकर **न्यायमूर्ति मैथ्यू** ने स्पष्ट किया। इस देश की जनता की प्रत्येक सार्वजनिक कार्य के सन्दर्भ में जानने का अधिकार है। वह प्रत्येक उस बात को जानने का अधिकार रखती है जो सार्वजनिक पदाधिकारियों द्वारा सार्वजनिक रूप से किया जाता है।

सन् 1981–82 के सर्वोच्च न्यायालय के एस0पी0 गुप्ता बनाम भारत सरकार के मुकदमें में सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय दिये बिना जवाबदेही के कोई लोकतान्त्रिक सरकार जिन्दा नहीं रह सकती है। सरकार की कार्य प्रणाली लोगों को उपलब्ध जवाबदेही का मूलमंत्र है। पारदर्शी सरकार की अवधारणा का सीधा सम्बन्ध जानने के अधिकार से है और यह अधिकार **अनुच्छेद 19 (1) (क)** में अन्तर्निहित है। अतः सरकारी सूचनाओं को सार्वजनिक करना निश्चित रूप से सामान्य नियम के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए।

यह निर्णय सूचना की स्वतंत्रता के वकालत करने के साथ–साथ ऐसी व्यवस्था का हिमायती है जो सूचनाओं के एकत्रिकरण एवं व्यवस्थित रखने की जिम्मेदारी का निर्वाह करें, निःसंदेह न्यायालय के उक्त निर्णयों के उपरान्त सूचना के अधिकार संबंधी अवधारणा को बल प्राप्त हुआ है।

सम्भावनाएं साकार हो रही है

केन्द्र सरकार द्वारा आई0टी0 टास्क फोर्स अर्थात् सूचना तकनीक कार्यदल बनाया गया था जिसके मुख्य उद्देश्य देश को सूचना तकनीकी से लैस करना था। इस कार्यदल ने ई–शासन के सन्दर्भ में दस बिन्दु सुझाये सरकारों के बीच में एक उच्च अधिकार प्राप्त समिति गठित करना, मंत्रालयों का निर्णय हो चुका है। आज पश्चिम राजस्थान के बाड़मेर से लेकर मणिपुर, इम्फाल, या उत्तर से हिमालय के किसी गाँव से लेकर महाराष्ट्र के नागपुर तक देश के विभिन्न क्षेत्रों में नागरिकों के द्वारा सूचना के अधिकार कानून का प्रयोग किया जा रहा है। यह कानून कदम दर कदम आगे बढ़ रहा है, लेकिन

कानून के दायरे व मुख्य प्रावधानों के सम्बन्ध में मत–मतान्तरों एवं अस्पष्ट क्षेत्रों को भी स्पष्ट करने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रन्थ–

1- Pandey, Rajendra,2017,Suchana Adhikar Adhiniyam : Right to Information Act. Publication, Dimond Pvt.Ltd.
2- Kumar, Deepak, 2006, Information Technology and Social Change, Rawat Publication House, Jaipur, Rajsthan.
3- यादव, अभय सिंह, 2005, सूचना का अधिकार अधिनियम, सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन्स।
4- सैनी, आर डी, 2002, सूचना का अधिकार, प्रकाशन हरियाणा साहित्य अकादमी, पंचकूला।
5- मलिक, अशोक, 2003 सूचना प्रोद्योगिकि पत्रकारिता, हरियाणा साहित्य पब्लिकेशन्स।
6- द कम्पलीट विजन अंक 11 वर्ष 2, अक्टूबर 2007, पृ0 22–26
7- https://hi.wikipedia.org
8- www.pmindia.gov.in
9- bharatdiscovery.org
10- www.guide2india.org

शिक्षक मूल्यांकनः आवश्यकता एवं सुझाव

डॉ0 राजेन्द्र कुमार जायसवाल
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, शिक्षा शास्त्र विभाग,
श्री गणेश राय पी0जी0 कालेज, डोभी, जौनपुर (उ0प्र0)

शोध संराश

शिक्षा में गुणवत्ता की धरी शिक्षक की गुणवत्ता में समाहित है। शिक्षक की गुणवत्ता में सुधार उसके आत्म उद्धेलन को शिक्षकीय अभिवृत्ति की ओर मोडने से प्राप्त हो सकता है। अतः उसे अधिक सामर्थ्यवान बनाने तथा उसके विवेक को ऐसी परिस्थितिया बनानी चाहिए जिनसे अध्यापको को निर्माण एवं सृजन की ओर बढ़ने की अभिप्रेरणा मिलेगी और जिस दिन शिक्षा की क्रियाकलापों में शिक्षक को आनन्द की अभूति होने लगेगी उस दिन शिक्षा में स्वतः गुणवत्ता स्थापित हो जाएगी।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के 70 वर्षो में भारत में शिक्षा के क्षेत्र में अभूतपूर्व विकास एवं विस्तार हुआ। परन्तु आज यह चिन्ता का विषय है कि जहाँ एक ओर शिक्षा के परिक्षेत्र में सूचना व तकनीकी के समायोजन के कारण शिक्षा का क्षेत्र अतिधिक विस्तृत व व्यापक हो रहा है अर्थात् संख्यात्मक रूप में अभिवृद्धि हो रही है, तो वही गुणात्मक दृष्टिकोण से दिन–प्रतिदिन उसमें हास भी हो रही है। समय–समय पर विभिन्न आयोगों संगोष्ठियों एवं शैक्षिक सम्मेलनों में शिक्षा के गिरते हुये स्तर पर सरकार व शिक्षाविदों द्वारा चिन्ता व्यक्त की जाती रही है। शिक्षा के गिरते हुए स्तरों के मूल कारकों में से एक महत्वपूर्व कारक शिक्षको की गुणवत्ता में हास को माना जा रहा है और यह प्रतिक्रिया अकारण नहीं हैं। यदि हम भारतीय शिक्षा व्यवस्था को दृष्टिपात करें तो इसका औचिन्य स्वयं ही समझ में आ जाता है।

भारतीय शिक्षा का इतिहास उठाकर देखे तो ज्ञात हो जाता है कि प्राचीन काल से ही भारत में गुरू–शिष्य परंपरा रही हैं, शिक्षक का जीवन कितना पवित्रत होता था, शिक्षक सदाचारी, श्रमशीलता जैसे पवित्र धारणाए एवं भावनाए होती थी वे अपने अधिकारों व कर्तव्यो के प्रति सतर्क व सजग थे परन्तु आधुनिक काल में विभिन्न तकनीकी एवं वैज्ञानिक विकास के फलस्वरूप विविध शिक्षण सामग्रियों का प्रचलन हुआ है जिसके कारण शिक्षक की भूमिका में परिवर्तन तो अवश्य आया है परन्तु आज भी वह कक्षा का सर्वेसर्वा है। शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में उसके इस महत्व को स्वीकार करते हुए कोठारी आयोग ने यह मत व्यक्त किया था कि हम चाहे कितनी भी अच्छी योजनाएँ एवं नीतिया क्यों न बना ले उनकी सफलता अथवा असफलता इस बात पर निर्भर करती है कि शिक्षक कितने उत्साह व आनन्द पूर्वक उन्हे कक्षा के अन्दर क्रियान्वित करते है।''

पिछले कुछ दशकों से शिक्षको ने अपने अधिकारो व कर्तव्यों को विस्यृत करने और भौतिक सुरवलोलुपता से अपने आपको आबद्ध कर लिया है जिसके कारण उनकी कार्यकुशलता एवं कर्तव्य परायणता पर सन्देह की उंगलिया उठने लगी है। शिक्षा के गिरते हुए स्तर विद्यालयों के शोचनीय शैक्षिक वातावरण एवं छात्रों की शैक्षिक योग्यता को देखकर शिक्षकों की योग्यता एवं कार्यकुशलता आदि पर प्रश्न चिन्ह लगाया जाने लगा है। जिसके कारण विभिन्न स्तरो पर शिक्षकों के मूल्याकंन व गुणवत्ता में सुधार की बात जोर पकडने लगी है। शिक्षक मूल्यांकन की आवश्यकता को स्वीकार करते हुए राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) ने एक पारदर्शी तथ्यों पर आधारित एवं शिक्षकों की सहमति व प्रतिभागिता द्वारा संचालित शिक्षक मूल्यांकन प्रणाली के विकास का प्रस्तावना की।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) के भाग 9.1 (प्र0सं0–29) में यह स्वीकार किया गया है कि किसी समाज में अध्यापको के स्तर से उसकी सांस्कृतिक दृष्टि का पता लगता है। कोई भी राष्ट्र अपने अध्यापको के स्तर के उपर नही उठ सकता। सरकार और समाज को ऐसी परिस्थितियाँ बनानी चाहिए जिससे अध्यापको को इस बात की स्वतन्त्रता हो कि वे नवीन प्रयोग का सके औरसंप्रेषण की उपयुक्त विधियों और अपने समुदाय की समस्यसाओं और क्षमताओ के अनरूप नये उपाय निकाल सके।

शिक्षको की जबाव देही एवं मूल्यांकन के संबन्ध में नई शिक्षा नीति का मत है कि अध्यापकों की नियुक्ति और तबादलों के मामले में व्यक्ति–निरपेक्षता लाने के लिए निर्देशन सिद्धान्त बनाये जायगें। उनके मूल्यांकन की ऐसी पद्धति विकसित की जायेगी जो पाददर्शी एवं तथ्यों पर आधारित होगी और जिसमें सभी का एक समान योगदान होगा। शैक्षिक योग्यता बढ़ाने के साथ उच्च ग्रेड में तरक्की के लिए शिक्षकों उचित अवसर दिया जायेगा। जबाव देही के मानक तथ किये जायेगें। अच्छे कार्य को प्रोत्सहित और निष्क्रियता को निरूत्साहित किया जाएगा। (पैरा–9 पृष्ठ–20)

उपरोक्त कथन से स्पष्ट है कि वर्तमान में शिक्षकों के मूल्यांकन की प्रचलित पद्धति में आमूल परिवर्तन की आवश्यकता है शिक्षक मूल्यांकन की नवीन विधि क्रियान्वयन से पूर्व शिक्षक मूल्यांकन की वर्तमान प्रणाली की भी समीक्षा करना आवश्यक है।

शिक्षक मूल्यांकन की वर्तमान व्यवस्था

अध्यापकों के मूल्यांकन की वर्तमान प्रचलित पद्धति की जो सबसे बड़ी कमी यह है कि वह शिक्षकों के लिए आवश्यक व्यावसायिक दक्षताओं पर आधारित नहीं है जिसके संदर्भ में शिक्षकों को वार्षिक कार्य का मूल्यांकन किया जा सके। विद्यालय निरीक्षण कितनी गम्भीरता से किये जाते है यह तो सभी को सर्वविदित है। सर्वप्रथम तो विद्यालयों का निरीक्षण नियमित रूप किया नहीं जाता है। यदि किये भी जाते है तो वह केवल रवानापूर्ति के लिये। जिसके फलस्वरूप शिक्षा में गुणात्मक सुधार या शिक्षकों की व्यावसायिक योग्यता में विकास की कल्पना करना ही अत्यन्त कठिन कार्य है। जबकि आन्तरिक रूप से विद्यालयों में प्राचार्य द्वारा प्रति प्रत्येक शिक्षक की सेवा पुस्तिका पर गोपनीय वार्षिक प्रतिवेदन अंकित करने की व्यवस्था है परन्तु यह भी मात्रा एक रवानापूर्ति मात्र है। क्योंकि सामान्यत प्राचार्य द्वारा शिक्षक की सेवापुस्तिका पर क्या वार्षिक रिपोर्ट अंकित किया गया है इसकी जानकारी शिक्षक को नहीं होती है और जानकारी तभी होती है जब प्राचार्य द्वारा किसी अनुचित कार्य के सन्दर्भ में कोई ऐसी नकरात्मक टिप्पणी अंकित करता है जिससे उसके विरूद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही की जा सके। ऐसी स्थिति में शिक्षक को अपना पक्ष या तर्क प्रस्तुत करने की एक अवसर प्रदान किया जाता है परन्तु यह भी परिस्थिति केवल अपवाद स्वरूप ही होती है। सामान्यता ऐसा दिखा गया है कि लगभग सभी शिक्षकों का वार्षिक प्रतिवेदन संतोषजनक ही होते है चाहे उनका कार्य वास्तव में संतोषजनक हो या न हो। हम इसे रूप में देख सकते है कि वर्तमान प्रचलित शिक्षक मूल्यांकन प्रणाली न तो तथ्यों पर आधारित है और न ही इसमें शिक्षकों की किसी भी प्रकार की प्रतिभागिता होती है।

उपरोक्त विवरण का विश्लेषण करने पर वस्तनिष्ठ शिक्षक मूल्यांकन की आवश्यकता स्वंय ही स्पष्ट हो जाती है परन्तु प्रश्न यह है कि वस्तुनिष्ठ एवं तथ्यों पर आधारित मूल्यांकन पद्धति की रूपरेखा क्या होगी। मूल्यांकन का अधिकार किसको होगा और वस्तुनिष्ठ शिक्षक मूल्यांकन किन मानदण्डों पर आधारित होगा। अतः सर्वप्रथम इन मानदण्डों का निर्धारण हो आवश्यक है।

विगत कुछ वर्षों में शिक्षक प्रभावशीलता की दिशा में किये गये अनुसंधानो का विश्लेषण करने पर कुछ ऐसे कारक या मानदण्ड सामने आये है जो एक प्रभावी शिक्षक के आवश्यक है और जिन्हें शिक्षक मूल्यांकन के लिये भी उपयोग किया जा सकता है ये है–

1. शिक्षक को विषय की संज्ञानता।
2. अध्यापन हेतु विभिन्न स्तरों के अनुरूप शैक्षिक तकनीक का ज्ञान।
3. अध्यापन के प्रति शिक्षक की अभिरूचि एवं अभिप्रेरणा तथा अपने व्यवसायिक विकास के प्रति जागरूकता।
4. शिक्षक द्वारा किये गये अनुसंधान कार्य तथा विभिन्न शैक्षिक क्रियाकलापों में उसका योगदान।

मूल्यांकन प्रक्रिया–

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि तथ्य आधारित मूल्यांकन कठिन और निरतंर चलने वाली प्रक्रिया है। अतः वर्तमान प्रचलित शिक्षक मूल्यांकन प्रक्रिया के स्थान पर एक ऐसी प्रणाली की आवश्यकता है जिसमें विभिन्न स्तरों के अधिकारी शिक्षकों के साथ बैठकर शिक्षक के वर्ष भर के कार्यों का एक रिपोर्ट तैयार करें ताकि शिक्षक के व्यावसायिक दक्षता हेतु मार्ग निर्देशत करें। शिक्षक को इस पूर्वनियोजित निर्धारित मार्ग पर कार्य करने के लिये आवश्यक समस्त सुविधाएं और अवसर प्रदान किये

जाये, तत्पश्चात् वर्ष के अतंन में शिक्षक के कार्य का मूल्यांकन करके उसकी उपलब्धियों, कार्य दक्षताओं एवं कमियों से उसे अवगत कराया जाये। यह ध्यान देने योग्य बात यह है कि इस प्रकार के मूल्यांकन का उद्देश्य शिक्षक को किसी भी प्रकार का पुरस्कृत अथवा दण्डित करना ने होकर केवल उसको अपने व्यावसायकि दक्षता के अवसर प्रदान करना और छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि बढ़ाना है जिससे शिक्षा में गुणात्मक सुधान लाया जा सके। शिक्षा में गुणवत्ता की धुरी शिक्षक की गुणवत्ता में समाहित है। शिक्षक की गुणवत्ता उसके उद्देलन को शिक्षकीय अभिवृत्ति की ओर मोड़ने से आ सकती है। उन्हें और सामर्थ्यवान बनाने और विवेक जगाने की जरूरत है यह सामर्थ्य स्वंय ही अद्भूत इच्छाशक्ति को शिक्षा में निवेश कर देने के आनंद को प्राप्त करने वाली प्रेरणा के रूप में होनी चाहिए।

अतः प्रस्तावित शिक्षक मूल्यांकन प्रणाली में मूल्यांकन के तीन अंग होंगे।

(1) शिक्षकों द्वारा स्व–मूल्यांकन
(2) प्राचार्य/प्रधानाध्यापक द्वारा मूल्यांकन
(3) मूल्यांकन साक्षात्कार

शिक्षक द्वारा स्व–मूल्यांकन– स्व–मूल्यांकन में अध्यापक अपनी व्यावसायिक दक्षता बढ़ाने हेतु वर्ष भर किये गये कार्यो अनुसंधानों व उपलब्धियों व अनुसंधान क्रियाओं में उत्पन्न होने वाली समस्याओं एवं उनकों दूर करने के विषय में उनके विचार व सुझाव होगें।

प्राचार्य द्वारा मूल्यांकन :– प्राचार्य द्वारा मूल्यांकन में शिक्षक द्वारा व्यावसायिक दक्षता बढ़ाने व शैक्षिक उपलब्धियों तथा दक्षता प्राप्ति में उत्पन्न कठिनाइयों व सुझावों के बारे में प्राचार्य की टिप्पणी होगी तथा शिक्षक के वर्षभर किये गये कार्यों के संबंध में उसका अपना मत होगा।

मूल्यांकन साक्षात्कार :– प्राचार्य जो एक समिति द्वारा संपन्न किया जायेगा। जिसके सदस्य विद्यायलय के प्राचार्य, शैक्षिक अधिकारी, शिक्षा जगत् एवं समाज के कुछ विशिष्ट व गणमान्य लोग होंगे। जो शिक्षक के साथ विचार–विमर्श करके उसके वार्षिक कार्यकुशलता व व्यावसायिक दक्षतका का लेखा–जोखा तैयार करें, ताकि शिक्षक की उपलब्धियों एवं कामियों के बारे में आवश्यक अपने सुझाव दे सके तथा आगामी वर्ष की कार्य योजना बनाने में सहायता कर सकें।

निष्कर्ष :– शिक्षक मूल्यांकन एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है। जिसमें शिक्षकों की पूर्ण भागीदारी आवश्यक है। क्योंकि शिक्षकों को स्वतंत्रता व जबावदेही में एकतत्वता समझने की दृष्टि विकसित करनी चाहिए। केन्द्रीकृत और सत्तावादी पद्धति को उलटकर शिक्षक तक विकेन्दीकरण करते हुए शिक्षकों में 'दायित्व सुपुर्दगी' का भीतरी जज्बात की शिक्षा में गुणवत्ता का व्यापक आधार बन सकेगा। जिस दिन शिक्षा में 'शिक्षकों को आनंद' आने लग जाएगा उसी दिन शिक्षा में गुणवत्ता स्थापित हो जायगी।

संदर्भ :

1. गुप्ता, एस0पी0 (1996) भारतीय शिक्षा इतिहास, विकास एवं समस्याएँ, शारदा पुस्तक मंदिर, इलाहाबाद।
2. जांगिड, राम विलास (2000) शिक्षा में गुणवत्ता का आधार शिक्षकों में गुणवत्ता, प्राइमरी शिक्षक एन0सी0ई0आर0टी0, नई दिल्ली।
3. सिंह, संध्या (2006) तालीम की जमीन, भारतीय आधुनिक शिक्षा, एन.सी.ई. आर.टी., नई दिल्ली।
4. अरोरा, जी. एल. व पाण्डेय, सरोज शिक्षक मूल्यांकन : आवश्यकता एवं सुझाव एन.सी.ई.आर.टी. नई दिल्ली
5. जायसवाल, रश्मि, (2004) अग्रवाल, डॉ0 सरस्वती अध्यापकों की व्यावसायिक संतुष्टि का अध्ययन, APEAR JOURNAL OF EDUCATION ALLAHABAD VOL-4.